अध्याय – 8
मात्रात्मक लक्षणों की वंशागति
(Inheritance of Quantitative Characters)

8.1. परिचय :

आपने पिछले अध्याय में मेंडल के नियम तथा उनके द्वारा मटर में सात लक्षणों की वंशागति के अध्ययन के बारे में पढ़ा है। ये सभी गुणात्मक लक्षण थे। किसी जीव की कोई आकारिकीय, शरीरीय, जैवरासायनिक या व्यावहारिक विशेषता, उस जीव का लक्षण कहलाता है। प्रत्येक जीव के लक्षण मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं : (i) गुणात्मक लक्षण, तथा (ii) मात्रात्मक लक्षण।

8.2. गुणात्मक लक्षण (Qualitative characters) :

इन लक्षणों की मुख्य विशेषताएँ निम्न हैं :

1. इन लक्षणों में विविधता असतत होती है। लक्षण के सामान्यतया दो (या कभी–कभी अधिक) विपर्यासी रूप होते हैं, जिससे इन लक्षणों के लिए जीवों को दो (या अधिक) स्पष्ट वर्गों में बाँटा जा सकता है। उदाहरण के लिए, मटर के दानों का आकार या तो गोल अथवा झुर्रीदार होता है।
2. प्रत्येक गुणात्मक लक्षण एक या कुछ अल्पजीनों (oligogenes) द्वारा नियंत्रित होते हैं। इन जीनों द्वारा लक्षण पर अधिक एवं स्पष्ट प्रभाव उत्पन्न होता है।
3. आनुवंशिक पृष्ठभूमि का इन लक्षणों पर विशेष प्रभाव नहीं होता है। आनुवंशिक पृष्ठभूमि एक ही केन्द्रक में उपस्थित सम्बन्धित जीन के अलावा शेष सभी जीनों को कहते हैं।
4. वातावरण का इन लक्षणों की अभिव्यक्ति पर कम प्रभाव पडता है जिससे किसी जीव के लक्षणप्ररूप से उसके जीनप्ररूप का अनुमान किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, मटर के पौधे की ऊँचाई के दो विपर्यासी लक्षणरूप होते हैं, लम्बा व बौना। मटर के पौधे दो वर्गों में बाँटे जा सकते हैं। TT व Tt जीनप्ररूप सदैव ही लम्बे पौधे तथा tt जीनप्ररूप बौना पौधा पैदा करते हैं, और जीन की अभिव्यक्ति वातावरण से बहुत कम प्रभावित होती है।
5. इन लक्षणों का अध्ययन सम्बन्धित लक्षण के विभिन्न वर्गों में उपस्थित व्यष्टियों की संख्या के आधार पर किया जाता है।

8.3. मात्रात्मक लक्षण (Quantitative character) :

इन लक्षणों की विशेषताएँ निम्न हैं :

1. इस प्रकार के लक्षणों में विविधता सतत होने के कारण इन्हें स्पष्ट वर्गो में विभाजित नहीं किया जा सकता है।
2. ये लक्षण कई जीनों द्वारा नियंत्रित होते हैं। लक्षण की अभिव्यक्ति पर इनमें से प्रत्येक जीन का अल्प व योगशील प्रभाव होता है। इस प्रकार के जीनों को बहुजीन (Polygenes) तथा, कभी–कभी, गौण जीन (Minor genes) कहा जाता है।
3. इन लक्षणों की अभिव्यक्ति पर वातावरण का काफी अधिक प्रभाव पड़ता है।
4. इन लक्षणों पर आनुवंशिक पृष्ठभूमि का काफी प्रभाव पड़ता है।
5. ऐसे लक्षणों का अध्ययन विभिन्न व्यष्टियों में इन लक्षणों का मापन करके किया जाता है, इसी कारण इन्हें मात्रात्मक लक्षण कहा जाता है।

आनुवंशिकी के मूलभूत सिद्धान्तों के स्थापित होने के बाद 1900 में मेंडल के वंशागति नियमों की पुनः खोज के कारण बहुत से वैज्ञानिकों ने मात्रात्मक लक्षणों का पुनः अध्ययन किया। डि व्रीज (de Vries), बेट्सन (Bateson) जैसे आनुवंशिकीविदों के मतानुसार मात्रात्मक लक्षणों में विविधता वातावरण के प्रभाव से उत्पन्न होती है, और ये जीनों द्वारा नियंत्रित नहीं होते हैं। फ्रैंसिस गाल्टन (Francis Galton) व उनके सहयोगियों ने मानव में लम्बाई, शरीर का वजन आदि का अध्ययन कर बताया कि आनुवंशिक कारणों से भी लक्षणों में विविधता उत्पन्न होती है। लेकिन इन वैज्ञानिकों के मतानुसार मेंडल के वंशागति के नियम मात्रात्मक लक्षणों पर लागू न होकर केवल गुणात्मक लक्षणों पर ही लागू होते हैं। मात्रात्मक लक्षणों की वंशागति का वर्णन इन वैज्ञानिकों ने सम्मिश्रण वंशागति के रूप में किया था। इसके अनुसार, जीन कणीय नहीं होते बल्कि तरल होते हैं, जिससे विभिन्न

विकल्पियाँ एक साथ आने पर दोनों ही विकल्पियों के गुणों में परिवर्तन हो जाता है।

तत्पश्चात् किए गए अध्ययनों से उपरोक्त मत गलत साबित हुए। सर्वप्रथम यूल (Yule) ने 1906 में परिकल्पना दी, कि मात्रात्मक लक्षणों में सतत विविधता कई लघु एवं योगशील (Additive) प्रभाव वाले जीनों द्वारा उत्पन्न हो सकती है। इस प्रकार के जीनों की पौधों तथा जन्तुओं में उपस्थिति के प्रमाण तीन वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत किये गये : निल्सन–एहिल (Nilsson-Ehle) ने 1908 में गेहूँ व जई के दानों के रंग, ईस्ट (East) ने 1916 में तम्बाकू में दलपुंज की लम्बाई तथा डेवेनपोर्ट (Davenport) ने 1913 में मनुष्यों में त्वचा के रंग पर किए गए अध्ययनों से ये प्रमाण प्रस्तुत किये। इन वैज्ञानिकों के अनुसंधानों से मात्रात्मक लक्षणों की वंशागति की बहुकारक परिकल्पना (Multiple factor hypothesis) विकसित हुई, जो कि आज सर्वमान्य है।

8.4. बहुकारक परिकल्पना :

यह परिकल्पना निल्सन–एहिल ने प्रतिपादित की। गेहूँ के दानों का रंग एक मात्रात्मक लक्षण है तथा इस लक्षण के लिए निल्सन–एहिल ने विभिन्न संकरण किये। उन्हें F_2 पीढ़ी में 3 लाल : 1 सफेद, 15 लाल : 1 सफेद तथा 63 लाल : 1 सफेद दानों का अनुपात मिला। इन अनुपातों के आधार पर पाया कि दानों का रंग क्रमशः एक, दो तथा तीन प्रभावी जीनों द्वारा नियंत्रित तथा इनका प्रभाव संचयी था। उसने दानों के रंग को ध्यान से देखा और पाया कि F_2 में 15 लाल

बहुकारक परिकल्पना द्वारा गेहूं में दाने के रंग की वंशागति का आरेख :

जनक पीढ़ी ♀ $R_1R_1R_2R_2$ x ♂ $r_1r_1r_2r_2$

गाढ़ा लाल सफेद

युग्मक R_1R_2 r_1r_2

F_1 पीढ़ी $R_1r_1R_2r_2$

मध्यम लाल

F_1 पीढ़ी में स्वपरागण ♀ $R_1r_1R_2r_2$ x ♂ $R_1r_1R_2r_2$

युग्मक

F_2 पीढ़ी

♀ \ ♂	R_1R_2	R_1r_2	r_1R_2	r_1r_2
R_1R_2	$R_1R_1R_2R_2$ गाढ़ा लाल	$R_1R_1R_2r_2$ मध्यम गाढ़ा लाल	$R_1r_1R_2R_2$ मध्यम गाढ़ा लाल	$R_1r_1R_2r_2$ मध्यम लाल
R_1r_2	$R_1R_1R_2r_2$ मध्यम गाढ़ा लाल	$R_1R_1r_2r_2$ मध्यम लाल	$R_1r_1R_2r_2$ मध्यम लाल	$R_1r_1r_2r_2$ हल्का लाल
r_1R_2	$R_1r_1R_2R_2$ मध्यम गाढ़ा लाल	$R_1r_1R_2r_2$ मध्यम लाल	$r_1r_1R_2R_2$ मध्यम लाल	$r_1r_1R_2r_2$ हल्का लाल
r_1r_2	$R_1r_1R_2r_2$ मध्यम लाल	$R_1r_1r_2r_2$ हल्का लाल	$r_1r_1R_2r_2$ हल्का लाल	$r_1r_1r_2r_2$ सफेद

: 1 सफेद को रंग की तीव्रता के आधार पर पाँच वर्गों में बाँटा जा सकता हैं। यह अनुपात 1 गाढ़ा लाल : 4 मध्यम गाढ़ा लाल : 6 मध्यम लाल : 4 हल्का लाल : 1 सफेद था।

उपरोक्त परिणामों को समझाने के लिए निल्सन–एहिल ने निम्न परिकल्पना की। (1) गेहूँ में इन किस्मों के दानों का रंग दो जीन द्वारा नियन्त्रित होता है। (2) प्रत्येक जीन का एक विकल्पी रंग उत्पन्न करता है (धनात्मक विकल्पी), जबकि दूसरा विकल्पी रंग उत्पन्न नहीं करता है (ऋणात्मक विकल्पी)। (3) जीनों के धनात्मक विकल्पियों का दाने के रंग पर प्रभाव एक समान, थोड़ा तथा योगशील होता है। गेहूँ की किस्मों में दानों के रंग के लिए दो जीनों में R_1 व R_2 धनात्मक विकल्पी तथा r_1 व r_2 ऋणात्मक विकल्पी हैं। दो जनकों का जीनप्ररूप क्रमशः $R_1R_1R_2R_2$ (गाढ़ा लाल) व $r_1r_1r_2r_2$ (सफेद) होगा और इनके युग्मकों क्रमशः R_1R_2 एवं r_1r_2 के संयोग से F_1 पीढ़ी में $R_1r_1R_2r_2$ जीनप्ररूप मिला। दोनों जीनों में स्वतन्त्र अपव्यूहन के कारण F_1 में $R_1R_2, R_1r_2, r_1R_2, r_1r_2$ युग्मक प्राप्त हुए। F_2 पीढ़ी में F_1 के पौधों में स्वपरागण से कुल 16 संभावित युग्मनज प्राप्त हुए। जिन्हें कुल 9 भिन्न जीनप्ररूपों में बाँटा जा सकता है।

बहुकारक परिकल्पना द्वारा गेहूं में दाने के रंग की वंशागति का आरेख दिया गया है

ये जीन प्रारूप निम्न प्रकार से है :

$1\ R_1R_1R_2R_2$: $2\ R_1R_1R_2r_2$: $2\ R_1r_1R_2R_2$: $4\ R_1r_1R_2r_2$: $1\ R_1R_1r_2r_2$: $2\ R_1r_1r_2r_2$: $1\ r_1r_1R_2R_2$: $2\ r_1r_1R_2r_2$: $1\ r_1r_1r_2r_2$

इनमें $R_1R_1R_2R_2$ में चार धनात्मक विकल्पी होने से गाढ़ा लाल रंग होगा। इसी तरह जीनप्ररूप $R_1r_1R_2R_2$ तथा $R_1R_1R_2r_2$ में तीन धनात्मक विकल्पी से दानों का रंग मध्यम गाढ़ा लाल रंग होगा। जीनप्ररूपों $R_1r_1R_2r_2$, $r_1r_1R_2R_2$ व $R_1R_1r_2r_2$ में केवल 2 धनात्मक विकल्पी होने से दानों का रंग मध्यम लाल होगा। जीनप्ररूप $R_1r_1r_2r_2$ व $r_1r_1R_2r_2$ होने के कारण दानों का रंग हल्का लाल होगा। इसके विपरित $r_1r_1r_2r_2$ जीनप्ररूप में ऋणात्मक विकल्पियों के कारण दानों का रंग सफेद होगा। अतः लक्षणप्ररूप अनुपात 1 गाढ़ा लाल : 4 मध्यम गाढ़ा लाल : 6 मध्यम लाल : 4 हल्का लाल : 1 सफेद रंग प्राप्त होगा। इस प्रकार निल्सन–एहिल के अध्ययन से पौधों में एक समान, थोड़ा तथा योगशील प्रभाव वाले जीनों की उपस्थिति का स्पष्ट प्रमाण मिला। इससे बेटसन व गाल्टन द्वारा सुझाये मत गलत सिद्ध हुए। अन्ततः यह सिद्ध हुआ कि मात्रात्मक लक्षण जीनों द्वारा उत्पन्न होते हैं एवं इन जीनों की वंशागति मेंडल के नियमों के अनुसार ही होती है।

निल्सन–एहिल के अध्ययन में लक्षण में विविधता असतत थी। ऐसे लक्षण जिनमें विविधता असतत तथा मात्रात्मक वंशागति प्रदर्शित करते है, वे मात्रात्मक–कल्प (quasiquantitative) लक्षण कहलाते हैं। उदाहरणार्थ, ऐसे अन्य लक्षण मटर, चना आदि में प्रति पौधा फलियों की संख्या, प्रति फली में दानों की संख्या आदि। निल्सन–एहिल द्वारा अध्ययन किए गये मात्रात्मक लक्षणों में विविधता के सतत होने का प्रमाण ईस्ट ने 1916 में दिया।

8.5. ईस्ट के प्रयोग :

बहुकारक परिकल्पना को ही ई.एम. ईस्ट (E.M. East) ने 1916 में मक्का की बाली तथा तम्बाकू के पुष्प के दलपुंज की लम्बाई की वंशागति सम्बन्धी परिणाम प्रकाशित किए। इनके द्वारा तम्बाकू के दलपुंज लम्बाई के विविध दो जनकों ; की जगह, जिनकी औसत लम्बाई क्रमशः 40 एवं 93 मिलीमीटर थी, में संकरण करवाया। F_1 पीढ़ी के पौधों के पुष्प में दलपुंज लम्बाई औसत 63 मिलीमीटर थी। F_2 पीढ़ी के पौधों में दलपुंजों की लम्बाई में काफी विविधता पाई और यह विविधता सतत थी। ईस्ट ने अपने प्रयोग के परिणामों की व्याख्या सांख्यिकी विश्लेषण विधियों द्वारा की, जो कि मात्रात्मक लक्षणों के लिए उपयुक्त है। ईस्ट की संक्षिप्त व्याख्या निम्न प्रकार से है :

1. दोनों जनक समयुग्मज व इनमें विविधता वातावरण के कारण थी।
2. F_1 पीढ़ी में औसत दलपुंज लम्बाई दोनों जनकों के मध्यवर्ती पाई, जो कि बहुकारक वंशागति के अनुसार है।
3. F_1 पीढ़ी के पौधों के दलपुंज लम्बाई में विविधता जनकों में उपस्थित विविधता के बराबर व वातावरण के कारण थी।
4. F_2 पीढ़ी की औसत दलपुंज लम्बाई F_1 पीढ़ी के औसत लम्बाई के समान पाई गई। F_2 पीढ़ी में जनकों तथा F_1 पीढ़ी की अपेक्षा विविधता अधिक पाई गई जो कि जीनों के स्वतन्त्र अपव्यूहन के कारण (तथा वातावरण के कारण भी) होगी।

इस प्रकार उपरोक्त व्याख्या स्पष्ट करती है कि मात्रात्मक लक्षणों की वंशागति बहुकारकों जिन्हें आजकल बहुजीन कहा जाता है, के द्वारा होती है। ईस्ट के प्रयोगों में मात्रात्मक लक्षणों का बहुकारकों के द्वारा नियंत्रित होते हैं तथा वातावरण के अधिक प्रभाव से इनमें विविधता सतत पाई गई। बाद के अध्ययनों से मालूम हुआ कि बहुकारकों का प्रभाव योगशील व अल्प होता है तथा ये प्रभाविता एवं प्रबलता भी प्रदर्शित करते है।

इस प्रकार मात्रात्मक लक्षणों की वंशागति भी गुणात्मक लक्षणों की वंशागति के अनुरूप ही होती है, अर्थात् मेंडल के विसंयोजन एवं स्वतन्त्र अपव्यूहन के नियम के अनुसार ही होती है।

सारांश

जीवों में आकारिकी, शारीरिय, जैव रासायनिक या व्यावहारिक विशेषता, उस जीव का लक्षण कहलाता है। जीवों में लक्षण गुणात्मक व मात्रात्मक प्रकार के होते हैं। गुणात्मक लक्षण एक या कुछ अल्प जीनों द्वारा निर्धारित होते हैं। इन लक्षणों में विविधता असतत् होती है। गुणात्मक लक्षणों की अभिव्यक्ति पर वातावरण का बहुत कम प्रभाव पड़ता है। मात्रात्मक लक्षण कई जीनों द्वारा नियंत्रित होते हैं। इनकी अभिव्यक्ति पर वातावरण का काफी अधिक प्रभाव पडता है। इन लक्षणों में विविधता सतत् होती है। मेंडल के समय यह माना जाता था कि उनके वंशागति के नियम केवल गुणात्मक लक्षणों पर लागू होते हैं। परन्तु बाद में निल्सन एहिल द्वारा प्रतिपादित बहुकारक परिकल्पना के अनुसार मात्रात्मक लक्षण जीनों द्वारा उत्पन्न होते हैं। इन जीनों के एक समान, थोड़ा तथा योगशील प्रभाव से इन लक्षणों की अभिव्यक्ति होती है। अतः यह सिद्ध हुआ कि इन जीनों की वंशागति मेंडल के नियमों के अनुसार ही होती है। इनके अध्ययन के लक्षण में विविधता सतत् नहीं थी। परन्तु इन लक्षणों में विविधता के सतत् होने का प्रमाण ई.एम.ईस्ट ने 1916 में दिया। इस प्रकार मात्रात्मक लक्षणों की वंशागति भी गुणात्मक लक्षणों की वंशागति के अनुरूप ही होती है, अर्थात् मेंडल के विसंयोजन एवं स्वतंत्र अपव्यूहन के नियम के अनुसार ही होती है।

प्रश्न :

1. गुणात्मक लक्षणों की विशेषता है :
   (क) विविधता असतत्
   (ख) विविधता सतत्
   (ग) विविधता असतत् व सतत्
   (घ) उपरोक्त में से कोई नहीं
2. बहुकारक परिकल्पना का प्रतिपादन किया था :
   (क) मेंडल ने
   (ख) निल्सन–ऐहिल ने
   (ग) फ्रैंसिस–गाल्टन ने
   (घ) ई.एम.ईस्ट ने
3. जीवों के लक्षण को परिभाषित कीजिए।
4. मात्रात्मक–कल्प लक्षण किसे कहते हैं?
5. मात्रात्मक लक्षण की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
6. गुणात्मक लक्षण मात्रात्मक लक्षण से किस प्रकार भिन्न हैं? स्पष्ट कीजिए।
7. बहुकारक परिकल्पना से सम्बन्धित ईस्ट के प्रयोग व परिणामों की व्याख्या कीजिए।